

इक्कीसवीं सदी की स्त्री कविता का समाजशास्त्र

डॉ. साईनाथ तुकाराम उमाटे

हिन्दी विभाग प्रमुख, दयानंद वाणिज्य महाविद्यालय, लातूर

ई-मेल : umatesai85@gmail.com

बीसवीं शती में साहित्य का समाजशास्त्र नाम से साहित्यलोचन की एक पृथक शाखा विकसित हुई। अमेरिकन एवं यूरोपीय देशों में ज्ञान की इस शाखा ने अपने अस्तित्व को स्थापित किया है। और उसका विकास समाजशास्त्र की नव विकसित शाखा के रूप में इक्कीसवीं सदी में विकास की ओर अग्रसर है। भारत जैसे अनेक देशों में इसका प्रभाव दृष्टीगोचर होता है। भारत वर्ष में यह विषय नवीन होने के बावजूद इसके अध्ययन के प्रति लोगों में रुचि दिन-ब-दिन बढ़ रही है। समाजशास्त्र मनुष्य के सामाजिक जीवन का अध्ययन करता है। आज समाजशास्त्र की कई शाखाएँ विकसित हुई हैं। संस्कृति का समाजशास्त्र, ज्ञान का समाजशास्त्र, धर्म का समाजशास्त्र, विज्ञान का समाजशास्त्र, मूल्यों का समाजशास्त्र, राजनीति का समाजशास्त्र तथा साहित्य का समाजशास्त्र आदि प्रमुख शाखाएँ हैं। इनमें से साहित्य का समाजशास्त्र साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन की प्रणाली है।

उपर्युक्त समाजशास्त्र की शाखाओं की भाँति साहित्य के समाजशास्त्र की पृथक शाखाएँ अस्तित्व में आयी। जैसे उपन्यास का समाजशास्त्र, नाटक का समाजशास्त्र, कहानी का समाजशास्त्र, कविता का समाजशास्त्र, निबंध का समाजशास्त्र, आत्मकथा का समाजशास्त्र, रेखाचित्र एवं संस्मरणों का समाजशास्त्र आदि शाखाएँ हैं। साहित्य के समाजशास्त्र की इन शाखाओं का विकास बीसवीं शताब्दी की देन है। और इक्कीसवीं सदी में निरंतर विकास की ओर अग्रसर है। अब तक साहित्य की विभिन्न विधाओं में समाजशास्त्र का जो विकास हुआ उनमें उपन्यास और नाटक सबसे अधिक विकसित हुए हैं। कहानी का समाजशास्त्र भी विकास की ओर अग्रसर है। किन्तु कविता का समाजशास्त्र सबसे कम विकसित हुआ है।

प्रो. मैनेजर पाण्डेय ने साहित्य के समाजशास्त्र पर एक महत्वपूर्ण और स्तरीय ग्रंथ लिखा है 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका' जिसमें उन्होंने लिखा है कि कविता के समाजशास्त्र के विकास के लिए जरूरी है कि कविता के विशिष्ट स्वरूप, उसकी बनावट और कला की बारिकियों में उतर कर उसकी ऐतिहासिकता और सामाजिकता की खोज करेंगे में सक्षम पद्धती का विकास हो। केवल कविता की विषय वस्तु कवि के दृष्टिकोण, समाज के संदर्भ, घटनाओं के संकेत और कविता की विचारधारा की खोज या फिर रचना के सामाजिक परिवेश और प्रभाव का विवेचन करनेवाली समाजशास्त्रीय दृष्टि से कविता के सार्थक समाजशास्त्र का विकास न होगा। कविता के समाजशास्त्र के लिए यह सब आवश्यक है, लेकिन पर्याप्त नहीं। कविता की आत्मपरकता और भाषिक संवेदनशीलता में निहित सामाजिकता की पहचान करनेवाले समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण का विकास जरूरी है।¹

उपर्युक्त विमर्श के आलोक में सर्वप्रथम कविता समाज की उपज। सामाजिक घटना है। वह जीवन और जगत का पुनःसृजन करती है। उसमें जनमन और मानवीय संवेदना तथा सामाजिक जीवन का सजीव चित्राकण होता है। कविता की प्रेरणा, प्रयोजन एवं स्वरूप निर्धारण में समाज का बड़ा योगदान होता है। वह सामाजिक प्रेरणा से उद्भूत होती है। कविता सामाजिक परिवर्तन में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप करती है या नहीं यह विवाद का विषय हो सकता है, किन्तु समाज के हित साधन के लिए 'सूरसरी सम सब कहीं हित होई' के विराट लक्ष्य के प्रति परिचालित होती है। दरअसल समाज का वास्तविक स्वरूप कविता में निश्चित आकार ग्रहण कर लेता है। वह समाज के निर्माण में, उसके विकास में, एवं उन्नयन में महती भूमिका अदा करती है। वस्तुतः साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है। इससे स्पष्ट है कि साहित्य में समाज का चेहरा रचा गया है।

भूमंडलीकरण, औद्योगिकरण, प्रोद्योगिकी, वैज्ञानिकता, उपभोक्तावाद, पर्यावरण प्रदूषण, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, पूँजीवाद तथा बाजारीकरण आदि के दौर में इक्कीसवीं सदी की हिंदी महिला रचनाकारों पर पुनर्विचार करना आवश्यक है। इससे महिला रचनाकारों के काव्य सृजन के विषय में जरूरी नतीजे निकाले जा सकते हैं। आज यदि हमारे पाठक एवं छात्रों में स्त्री लेखन अधिक पसंद किया जा रहा है तो कहीं न कहीं इसकी एक वजह स्त्री कवयित्रियों की सामाजिक सक्रियता भी है। स्त्री रचनाकारों के ऐक्टिविस्ट होने की जरूरत पर बल देते हुए कात्यायनी ने 'कुछ जीवन्त कुछ ज्वलन्त' ग्रंथ में लिखा है कि मेरी यह पक्की धारणा है कि स्त्री लेखन में भी स्त्री जीवन की वास्तविकता, सच्चाईयाँ और चुनौतियाँ तभी आ सकती हैं जब हम अपने सामाजिक सरोकारों के हिसाब से किसी न किसी रूप में 'ऐक्टिविस्ट' हों और साथ ही, घर-गृहस्थी से लेकर सड़क-ऑफिस-दफ्तर तक, अपने अधिकारों के प्रति जागरूक और अपनी मान्यताओं के प्रति ईमानदार औरत के रूप में लगातार एसर्ट करने का - अपनी उपस्थिति दर्ज कराने का, जोखिम उठाते रहते हों और उसका खामियाजा भुगतते रहते हों। यह हमारे जीवन के हर जागृत क्षण में जारी रहनेवाला संघर्ष है, जो अविरोध है, और जिससे एक स्त्री यदि थकती है तो मुक्ति के अपने स्वप्नों को 'विजन' को और प्रोजेक्ट को खो देती है। मैं जोर देकर कहना चाहूँगी कि स्त्री लेखक के ऐक्टिविस्ट होने की दरकार है, तभी वह बदलते उत्पादन सम्बन्धों सामाजिक सम्बन्धों और आत्मिक जगत का साक्षात्कार कर सकेगी, वर्तमान की कोख में छिपे भविष्य को भी पहचान कर सकेगी और ऊपरी सच्चाई की परतों को भेदकर सारभूत यथार्थ तक पहुँच सकेगी।²

स्त्री लेखक के 'ऐक्टिविस्ट' होने की दरकार को समझते हुए जिन गिनी-चुनी कवयित्रियों ने पिछले कुछ वर्षों की सशक्त हिंदी कविता को संभव किया है उनमें कात्यायनी का नाम आग्रणी है। इस कवयित्री के आदर्श पाब्लों नेरूदा, नाजिम हिकमत जैसे कवि हैं और इनकी प्रगतिशील दृष्टि, सामाजिक, राजनीतिक परिवर्तन की प्रक्रिया में आस्था रखती है। इसलिए यथास्थिति के प्रति एक विद्रोह इनकी कविताओं में प्रायः मिलता है। 'सात भाईयों के बीच चपा' संग्रह की सर्वप्रथम कविता से ही अपनी विद्रोही स्त्री द्वारा कात्यायनी स्थापित सत्ता को चुनौती देती है। कविता का शीर्षक है- 'इस स्त्री से डरो' में कवयित्री कहती है कि जहाँ बन्धनों से जकड़ी

हुई एक साधारण स्त्री के भीतर आजादी का एक अनन्त मानवीय स्पेस है। जैसे-

यही स्त्री

सब कुछ जानती है।

पिंजरे के बारे में

जाल के बारे में

यंत्रणा गृहों के बारे में।³

कात्यायनी की यह स्त्री आज की स्त्री है। आज की कविता को रचनेवाली, आज की कविता में बसने वाली स्त्री है यह, आज की कविता का सपना है यह स्त्री। इस स्त्री से डरने की जरूरत है क्योंकि यह स्त्री न केवल पिंजरे, जाल तथा यंत्रणा गृहों के बारे में जानती है बल्कि इसने इनकी प्रतिरोधी संस्कृति को भी तैयार किया है। वह 'पिंजरे के बरक्स' 'नीले अनंत विस्तार में उड़ने के रोमाच' को रखती है, 'जाल' के खिलाफ 'गहरे समुद्र में खो जाने के सपनों के बारे में बात करने लगती है और 'यंत्रणागृहों' के प्रतिरोध में 'प्यार के बारे में एक गीत' का इस्तेमाल करती है।

असल में आज के समय में स्त्री व्यक्तित्व को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक हैसियतों की लोकतांत्रिक पुनःस्थापना की जरूरत है। सामाजिक व्यवस्था को देखे बिना नियम बताने से सत्तात्मक शक्तियों का निवारण नहीं हो पायेगा। मानवहित की महत्ता को समझती हुई, संजोती हुई आज की कवयित्री इस समाज के सभी स्तरों पर विद्यमान असमानताओं पर बोलती है। सामाजिक रूप में असुरक्षित स्त्री की सामाजिकता को लेकर हमारी व्याख्या में जो गलतियाँ हैं, खामियाँ हैं, उसको पुनर्परिभाषित करने का कार्य कात्यायनी ने निम्न पंक्तियों में किया है।

हम पढ़ते हैं

अपने सामाजिक प्राणी होने के बारे में।

हम होते हैं

एक सामाजिक प्राणी।

बचा रह जाता है

बस जानना

एक सामाजिक प्राणी होने के बारे में।⁴

बुनियादी तौर पर कात्यायनी की कविता से यह जाना जा सकता है कि वे जुझारू चेतना की कवयित्री हैं। उनकी कविता में स्त्री संघर्ष के स्वरों तथा स्त्री की मुक्ति की कामना

को भी पहचाना जा सकता है। उनकी स्त्रियाँ विद्रोही, जुझारू, जागरूक, आत्मसम्मान से युक्त बुद्धिजीवी स्त्रियाँ हैं। कात्यायनी की कविता हमारे समाज के सामाजिक, राजनितिक, सांस्कृतिक परिवेश में स्थित है और इस परिवेश में स्त्री की स्थिति पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित है। उनकी कविता में विशेष किस्म की ताजगी है, क्योंकि उन्होंने अपनी कविता में कथित वैश्विक समाज के विशिष्ट बिम्ब सृजित किए हैं। सामाजिक परिस्थितियों के दमन का उद्घाटन उनकी कविता की शक्ति है। उन्होंने अपनी कविता में हमारे समाज की स्त्री की स्थिति पर बड़े वस्तुगत और सटीक ढंग से फोकस किया है। न सिर्फ अपनी सामाजिक सक्रियता, वरन अपनी कविता द्वारा कात्यायनी मौजूदा मानव विरोधी माहौल का सशक्त प्रतिरोध करती हैं।

इक्कीसवीं सदी के दौर में जब स्त्री कविता अपनी मुखरता का परिचय देती है तो हमें स्त्री कविता की पृष्ठभूमि की तरफ ध्यान देना होगा। सामाजिक अन्याय के विरुद्ध, असांस्कृतिक कारवाइयों के विरुद्ध समय-समय पर स्त्री लेखिकाओं ने अपनी कविता के माध्यम से सार्थक भूमिकाएँ निभाई हैं। वह इतना जरूर पहचानती है कि हमारा स्वत्व, परिवार, अधिकार, राजनीति, परंपरा, संवेदना, नैतिक दृष्टि, लैंगिकता तथा स्वतंत्रता सम्बन्धी संकल्पनाएँ आदि पुरुषकेन्द्रित हैं यानि अधिकार केन्द्रित हैं। इसलिए वह इसके बरक्स एक प्रतिसंस्कृति सृजित करना चाहती है। इक्कीसवीं सदी की स्त्री कविता अपना एक संसार सृजित कर रही है। वह अपने को अलगाने के लिए नहीं बल्कि अपने को रेखांकित करने के लिए हैं। इसके पहले जिसे अनदेखा किया गया उसी को वह देखना और दिखाना चाहती है। अनामिका की एक कविता सेफ्टीपिन इस अवसर पर विचारणीय है-

इमर्जन्सी वॉर्ड में

डॉक्टर की जो हैसियत होती है

सावित्री पाठक के हौडाए वस्तु-जगत में

इस सेफ्टी पिन की वही हैसियत थी !

क्या जाने कितनी आपातकालीन स्थितियाँ

उसने संभाली थी एकदम अकेले !

यह कविता सावित्री पाठक की चुड़ियों में लटका हुआ सेफ्टीपिन उसके जीवन संघर्ष को प्रस्तुत करता है। एक साधारण स्त्री अपने मामूली जीवन में संघर्ष करती है। इस कविता में स्त्री का आत्मविनोद और अन्तर्व्यथा सबकुछ मौजूद हैं। अनामिका के स्त्री विमर्श में वह विद्रोही नारी नहीं है

जो गृहस्थ जीवन को तोड़कर अपनी मुक्ति ढूँढ रही है, बल्कि वह घर-परिवार तथा समाज को साथ लेकर चल रही है। उन्होंने अपनी कविताओं में घर, परिवार, समाज, राजनीतिक, आर्थिक तथा धार्मिक अन्तर्विरोधों को उजागर किया है। यह दृष्टी कवयित्री को सामाजिक बोध से प्राप्त हुई है।

इक्कीसवीं सदी की स्त्री कवयित्रियों में गगन गिल महत्त्वपूर्ण हैं। आज के समय में उनकी उपस्थिति न सिर्फ महत्त्वपूर्ण है बल्कि कविता के समाजशास्त्रीय मूल्यांकन के लिए भी एक नई चुनौती है। उनकी कविताएँ हिंसक समाज में जितनी युवती के स्वप्न और दुःस्वप्न से सम्बन्धित हैं। साथ ही अनेक कविताएँ स्त्री की बहुविध संकटग्रस्त स्थितियों के संकेत से भी भरी पड़ी हैं। गगन गिल को अपनी वेदना को छिपाकर जीना असंभव ही नहीं बल्कि अनैतिक भी हो जाता - है। हिंदी में स्त्री लेखन हमेशा भारतीय सामाजिकता की खासियत से ओतप्रोत रहा है। अपनीयत पर सोचती कवयित्री हमेशा दूसरे ही पल में सामाजिकता पर नजर डालती है, विशेष कर स्त्री पुरुष सामंजस्य पर मसलन -

तुम नहीं होगे

तो हम नहीं होंगे

हम नहीं होंगे

तो दुनिया नहीं होगी !

अतः इसमें कोई शक नहीं कि हिंदी का स्त्री लेखन अपने सामाजिक पक्ष में दुनिया और दुनियादारी के अधिकार और वर्चस्व पर सवाल करके उसे समानता की राहों तक पहुँचाने के संकल्पों पर अग्रसर हैं।

इक्कीसवीं सदी की कविताओं में सामाजिक, सामुदायिक पहचान सूचित करने की शक्ति मौजूद है। स्त्री कविता अपनी कार्यसूची में घर-परिवार-समाज सबको जोड़ने की कोशिश में है। नीलेश रघुवंशी प्रायः परिवार कथा कहती है। उस परिवार में मा, पिताजी, भाई बहन आदि सभी हैं। लेकिन परिवार की कथा यहाँ बदली-बदली सी है। उनकी 'मा' शीर्षक कविता स्त्री की घबराहट की कविता के रूप में लिखी गई है। यह हर स्त्री की घबराहट की कविता बन जाती है।

माँ

बेसाखा आ जाती है तेरी याद

दिखती है जब कोई औरत ।

घबराई हुई प्लेटफार्म पर

हाथों में डलिया लिये

आँचल में ढँके अपना सिर

माँ मुझे तेरी याद आती है।

मेरी माँ की तरह

ओ स्त्री

उम्र के इस पड़ाव पर भी घबराहट है

क्यों? आखिर क्यों?

क्या पक्षियों का कलरव

झूठमूठ ही बहलाता है हमें⁷

नीलेश रघुवंशी की इस कविता में स्त्री की घबराहट के साथ पतित सामाजिकता के या धिनौने नागरिकबोध से युक्त सामाजिक जीवन में स्त्री का आतंकित होना महसूस किया गया है। घबराहट की यह अंदरूनी दुनिया एक स्त्री कविता ही सृजित कर सकती है। पर घबराहट को दूर करने का संकेत भी कविता में है।

मैं यहाँ यह बताना जायज समझता हूँ कि सभ्यता में आये हुए परिवर्तनों ने स्त्री समस्याओं को भी बदल दिया है। आत्माभिव्यक्ति का अवसर आज की स्त्रियों को प्राप्त होने के कारण उसके स्वरूप में भी बदलाव हुआ है। यद्यपि कभी-कभी अन्य आन्दोलन के समान स्त्री लेखन में उग्रवादी या विद्रोही चिन्तन के पुट छलक उठें। ममता कालिया की आधुनिक स्त्री कहती हैं-

पैंतीस साल मैंने सेवा की तुम्हारी

सुबह, शाम, आठों याम

तुम्हें गुड़े की तरह संजोया

अपने मंगलसूत्र में गनके-शा परोया

थे तो तुम छह फुटे, तगडे और तेजस्वी

मैंने तुम्हें रखा ज्यों कपारा का फोया।⁸

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं सदी की स्त्री कविता का समाजशास्त्रीय विश्लेषण अपने आप में एक उत्तेजक अनुभव है। उन्होंने अपने समय की समाजव्यवस्था, सामाजिक विसंगति, राजनीतिक विद्रूपता, धार्मिक प्रवंचना तथा सांस्कृतिक छल को जिस ढंग से उद्घाटित किया है, वह अपने आप में एक विशिष्ट काव्यात्मक उपलब्धि है। आज की स्त्री कविता गैर-सामाजिक होकर नहीं, बल्कि अधिक से अधिक सामाजिक होकर अपनी उपस्थिति दर्ज कर रही है। जिन कवयित्रियों ने अपने को सामाजिक सरोकारों से लम्बे समय तक अपने को दूर रखा, वे भी

अन्ततः आज हिंदी कविता की सामूहिक - सामाजिक जिम्मेदारी में शरीक हुई है, हो रही है। पुरुष वर्चस्ववादी तमाम उपहासों के बावजूद उनके काव्य में नयापन और तिखापन उजागर होता है। साथ ही कभी असाधारण अनुभव की अभिव्यक्ति, कभी विडंबनाओं से प्रतिरोध करती, कभी अमूलचूल परिवर्तन की माँग करके, कभी तल्ख और तीखी उपेक्षा के विरोध में अभिव्यक्ति के स्वर दृष्टीगोचर होते हैं।

संदर्भ सूची :

- 1) साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका मैनेजर पाण्डेय-पृ. सं. 226.
- 2) कुछ जीवन्त कुछ ज्वलन्त कात्यायनी पृ. सं. 139 तथा 146.
- 3) सात भाईयों के बीच चंपा कात्यायनी पृ. सं. 13.
- 4) इस पौरुषपूर्ण समय में कात्यायनी पृ. सं. 96.
- 5) दूब-धान- अनामिका - पृ. सं. 56.
- 6) यह आकांक्षा समय नहीं गगन गिल पृ. सं. 11.
- 7) घर निकासी - नीलेश रघुवंशी
- 8) खांटी घरेलू औरत ममता कालिया पृ. सं. 51.